Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2023 GISRRJ | Volume 6 | Issue 3 | ISSN : 2582-0095

उपनिषदों में सत्य की अवधारणा

राघवेन्द्र पाण्डेय
शोधच्छात्र,संस्कृत विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज, उत्तर प्रदेश।

Article Info
Volume 6, Issue 3
Page Number : 08-13
Publication Issue :
May-June-2023
Article History
Accepted : 01 June 2023
Published : 10 June 2023

शोधसारांश– उपनिषद् में कहा गया है कि इन्द्रियों को अन्तर्मुखी कर ब्रह्म को पाया जा सकता है। वह सत्य और असत्य अर्थात् कारण और कार्यरूप सत्य है। उपनिषदों में उपलब्ध सत्य के स्वरूप पर विस्तृत विवेचन किया गया, जिसकी महत्ता सर्वसिद्ध है।

मुख्य शब्द– उपनिषद्, सत्य, असत्य, कारण, कार्यरूप, वेद, वेदान्त।

वेद, वेदान्त में कहा गया है कि सत्य के समान दूसरा धर्म नहीं है। मानव जीवन के प्रेरक नैतिक आदर्श 'सत्य' संज्ञा से अभिहित है। अपने वास्तविक स्वरूप के प्रति सच्चा रहना यही वास्तविक धर्म है। ऋग्वेद में कहा गया है कि ऋत अनेक प्रकार की सुख शान्ति का स्रोत है। ऋत की भावना पापों को नष्ट करती है। मनुष्य को उद्‌बोधन और प्रकाश देने वाली ऋत की कीर्ति बहरे कानों में भी पहुँच रही है। ऋत की जड़े सुदृढ़ हैं। विश्व के नाना रमणीय पदार्थों में ऋत मूर्तिमान् हो रहा है। ऋत के आधार पर अनादि खाद्य पदार्थों की कामना की जाती है। ऋत के कारण ही सूर्य–रश्मियाँ जल में प्रविष्ट हो उसको ऊपर ले जाती हैं–

ऋतस्य हि शुरुधः सन्ति पूर्वीर ऋतस्य धीतिर्वृजिनानि हन्ति।
ऋतस्य श्लाको बधिरा ततर्द कर्णा बुधानः शुचमान आयोः।।
ऋतस्य दृव्वहा धरुणानि सन्ति पुरुणि चन्द्रा वपुषे वपूंसि।
ऋतेन दीर्घमिष्ठान्त पृक्ष ऋतेन गाव ऋतया विवेशुः।। ऋग्वेद–4/23/8–9

ऋग्वेद में एक स्थान पर कहा गया है कि जिस प्रकार द्युलोक का धारण बाह्य लोक से सूर्य द्वारा हो रहा है वैसे ही वास्तविक रूप से इस भूमि का धारण सत्य के आश्रय से ही हो रहा है।[1]

अतः सत्य ही इस संसार का आधार है। सत्य पर ही जीवन टिका है। अथर्ववेद में कहा गया है कि बढ़ा हुआ सत्य, उग्र, ऋत, दीक्षा, ब्रह्मचर्य, तप और यज्ञ पृथ्वी को धारण करते हैं।[2]

इसी प्रकार यजुर्वेद में भी कहा गया है कि व्रताचरण से ही मनुष्य में दीक्षा (उन्नत जीवन) की योग्यता प्राप्त होती है। दीक्षा से दक्षिणा की प्राप्ति होती है। दक्षिणा से अपने जीवन के आदर्शों में श्रद्धा और श्रद्धा से सत्य की प्राप्ति होती है।3

इस प्रकार वेदों के उक्त विचारों पर विवेचन करने से स्पष्ट है कि ऋत और सत्य की भावना ही वस्तुतः अन्य उदात्त भावनाओं की जननी है। समस्त सृष्टि प्रपञ्च एक निश्चित एवं शाश्वतिक नैतिकता पर प्रतिष्ठित है। उपनिषदें भी इसका अपवाद नहीं हैं। वेदों के समान उपनिषदों में भी इन उदात्त भावनाओं का वर्णन हुआ है

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

और उनमें इन जीवन मूल्यों की गहनता से विश्लेषण किया गया है। क्या करणीय है? क्या अकरणीय? जीवन का सर्वोच्च शुभ क्या है? पाप–पुण्य, कर्म–अकर्म, धर्म–अधर्म, शुभ–अशुभ, उचित–अनुचित? किसका पालन आवश्यक है और क्या त्याज्य है? आदि के स्पष्ट निर्देश उपनिषदों में दिये औपनिषदिक जीवन मूल्यों पर यदि विचार किया जाय तो हम पाते हैं कि सर्वप्रथम 'ईशोपनिषद्' में ही उपदेश दिया गया है कि संसार के चरम सत्य का दर्शन कराते हुए कहा कि संसार की चमक–दमक वाली प्रलोभन की वस्तुओं से बचकर रहें। सत्य पथ को देख, सत्य से विचलित न हों क्योंकि सत्य का मुख सुवर्ण पात्र से ढका हुआ है, उस सत्य धर्म के दिखाई देने के लिए तू उस आवरण को हटा दे–

हिरण्यमयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम्।
तत्त्वं पूषन्नपावृणु सत्यधर्माय दृष्टये।। ईश. 15

सत्य के इसी स्वरूप की व्याख्या करते हुए 'बृहदारण्यरकोपनिषद्' में कहा गया है कि निश्चय ही जो धर्म है, वही सत्य है। अतः सत्य कहने पर कहा जाता है कि धर्म कहता है और धर्म को कहते हुए कहा जाता है कि सत्य कहता है, अतः सत्य और धर्म दोनों एक ही हैं।[4] एक अन्य स्थान पर 'ब्रह्म' का नाम 'सत्यम्' कहा गया है।[5]

तैत्तिरीयोपनिषद्' में कहा गया है कि 'सत्यं वद्' सत्य बोलो। 'सत्पात्र प्रमादिता'। 'सत्यं वदिष्यामि' कहकर सत्य बोलने की प्रतिज्ञा की गयी है। इस उपनिषद् का यह प्रारम्भिक अनुवाक् मंगलाचरण के तौर पर प्रयुक्त हुआ है। इसमें ईश्वर को अनेक गुणात्मक नामों से सम्बोधित करते हुए विद्यार्थी अपनी तथा अपने गुरू की रक्षा की प्रार्थना करता है कि मित्र, वरुण, इन्द्र, बृहस्पति और विष्णु रूप महान् पराक्रमी ईश्वर हमारे लिए सुखकारक हों। ब्रह्म को नमस्कार हो, हे सर्वाधार ईश्वर आपको नमस्कार हो, आप ही प्रत्यक्ष ब्रह्म हो आप को ही प्रत्यक्ष ब्रह्म कहूँगा, दिव्य सत्य कहूँगा, सत्य कहूँगा, वह ब्रह्म मेरी रक्षा करें, वह उपदेष्टा आचार्य की रक्षा करें।[6]

इसी उपनिषद् की प्रथम अध्याय के प्रथमा वल्ली के षष्ठ अनुवाक में ईश्वर की उपासना का उपदेश 'प्राचीन योग्य' नामक शिष्य को देते हुए कहा गया है कि सत्य जिसकी आत्मा है, प्राणरूप अपनी सत्ता में जो रमण करता है, आनन्द ही जिसका मन है, शान्ति जिसकी सम्पत्ति है और जो अमर है, हे प्राचीन योग्य! ऐसे ब्रह्म की तू उपासना कर।[7]

इस प्रकार यहाँ सत्य ब्रह्म की उपासना करने का उपेदश दिया गया है। आगे भी सत्य, तप, स्वाध्याय और प्रवचन को ईश्वर का प्रेम पाने के लिए आवश्यक माना गया है। शास्त्रों का नियमपूर्वक अध्ययन करना, मनन करना और आत्म–निरीक्षण करना स्वध्याय कहलाता है। अध्यापन आदि के द्वारा वेद प्रचार करना स्वाध्याय कहलाता है। अध्यापन आदि के द्वारा वेद प्रचार को प्रवचन कहा जाता है। आगे करणीय कर्त्तव्यों का उपदेश देते हुए कहा गया है कि ऋत–तीनों कालों में एक जैसी रहने वाली वेदाज्ञा पर चलना। सत्य–मन, वाणी और कर्म में समता रखना। तप–द्वन्द्वों को सहना और नियमित जीवन बिताना। दम–इन्द्रियों पर अपना अधिकार रखना। शम–अन्तःकरण को शान्त रखना। अग्नियाँ–ब्रह्मचर्य, गृहस्थ और वानप्रस्थ सम्बन्धी तीनों अग्नियाँ स्थापित करना। अग्निहोत्र–प्रतिदिन हवन करना। अतिथियों की सेवा करना। मनुष्य ऋण चुकाना। सन्तान का पालन पोषण करना। सत्य ही श्रेष्ठ है, यह 'सत्यवादी' राथीतर मानता था। तप प्रधान है, यह 'पौरुशिष्टि' मानता था। स्वाध्याय और प्रवचन मुख्य हैं यह मुद्गल का पुत्र 'नाक' मानता था।' इसी उपनिषद् में आगे आचार्य शिष्य को वेद पढ़ाकर अन्त में समीप रहने वाले शिष्य को सत्य, धर्म, आदि के

मार्ग पर चलने का उपदेश देते हैं और से ये ग्यारह बातों पर अपना विशेष ध्यान आकृष्ट करते हुए कहते हैं[8]–

1. माता, पिता, आचार्य, और अतिथि को सदैव देवों की कोटि मानकर आदर करें।
2. सत्याचरण, धर्मपूर्वक व्यवहार करने, जो उपयोगी और कल्याणदि है, उसके प्राप्त करने, ऐश्वर्य के बढ़ाने, पढ़ने–पढ़ाने और पितरों से सम्बन्धित कर्मों को करने में प्रमाद न करें।
3. सत्य बोलो, धर्म का आचरण करो, स्वाध्याय करने में कभी प्रमाद मत करो।
4. शिक्षा समाप्त करने पर आचार्य को उचित दक्षिणा देनी चाहिए।
5. ब्रह्मचर्य के उपरान्त गृहस्थ में प्रवेश कर सन्तानोत्पत्ति करें।
6. विद्वानों का सदैव सत्कार करें।
7. जो आनन्दित कर्म हैं उन्हीं को करें, बुरे कर्म न करें।
8. श्रद्धा से, अश्रद्धा से, प्रसन्नता से, अन्यों की लज्जा से, भय से और प्रेमभाव से प्रत्येक अवस्था में दान करे।
9. गुरु के अच्छे आचरण का अनुकरण करें।
10. कैसा कर्म और व्यवहार करें? इसमें यदि सन्देह है तो स्वयं प्रवृत्त अथवा प्रेरणा से प्रवृत्त दयालु धर्मात्मा और सम्यक् विचारशील ब्राह्मणों जैसा बर्ताव करें।
11. यदि मतभेद हो तो उपर्युक्त विद्वानों जैसे बर्ताव करें। यही शास्त्र का आदेश, उपदेश और अनुशासन (शिक्षा) है।[9]

इसी उपनिषद् में आगे कहा गया है कि ब्रह्म सत्य, ज्ञानस्वरूप और अनन्त है। जो उसको अत्यन्त सूक्ष्म हृदयावकाश में निहित जानता है वह सब कामनाओं सहित ब्रह्म को पा लेता है।[10]

इसी उपनिषद् में कहा गया है कि इन्द्रियों को अन्तर्मुखी कर ब्रह्म को पाया जा सकता है। इसको पुरुष विधाता बतलाते हैं। इस विज्ञानमय कोश का शिर श्रद्धा, ऋत दाँया और सत्य बाँया पक्ष, योग धड़ और बुद्धितत्त्व आश्रय है।[11] ब्रह्म इस ब्रह्माण्ड को बनाकर उसमें अनुप्रविष्ट है। वह सत्य और असत्य अर्थात् कारण और कार्यरूप सत्य है। यह जो कुछ भी है वह सत्य है।[12] ब्रह्म सत्य है क्योंकि उसमें सभी व्यक्त और अव्यक्त पदार्थ विद्यमान रहते हैं और वह स्वयं भी योगी और उपासकों के लिए व्यक्त है और अन्यों के लिए अव्यक्त रहा करता है और जगत् भी सत्य है क्योंकि वह भी व्यक्त और अव्यक्त रूप से विद्यमान रहता है।

'प्रश्नोपनिषद्' में भी कहा गया है कि उन्हीं का यह ब्रह्मलोक है जिनके तप और ब्रह्मचर्य साधन हैं और जिनमें सत्य प्रतिष्ठित है।[13] अतः सत्य का आचरण करना आवश्यक है। 'मुण्डकोपनिषद्' में भी कहा गया है कि वेदों में जिन कर्मों के करने का विधान है और जिन्हें सूक्ष्मदर्शी विद्वानों ने उन वेदों का ज्ञान प्राप्त करके प्रकट किया है, उन्हें सत्यता के साथ सदैव करना चाहिए क्योंकि जगत् में मनुष्य का मार्ग अपने किए हुए कर्मों से ही बनता है–

'तदेत्सत्यं मन्त्रेषु कर्माणि कवयो यान्यपश्यंस्तानि त्रेतायां बहुधा सन्ततानि तान्याचरणं नियतं सत्यकामा एष वः पन्था स्वकृतस्य लोके।। मुण्डक. 1.2.1

यह एक बड़ा प्रश्न है कि सत्य को किसने उत्पन्न किया और क्यों? इसका उत्तर मुण्डकोपनिषद् में देते हुए कहा गया है कि इसी विराट् ब्रह्म से अनेक प्रकार के देव, साधक, मनुष्य, पशु, पक्षी, प्राणादि, प्राणियों के जीवन साधन, धान और जौ आदि प्राणियों की खाद्य वस्तुएँ तथा तप, श्रद्धा सत्य और ब्रह्मचर्य आदि अन्य कर्त्तव्य विधियों को इसलिए उत्पन्न किया कि जिससे मनुष्य लोक और परलोक की सिद्धि कर सकें–

तस्माच्च देवा बहुधा सम्प्रसूताः साध्यः मनुष्याः पशवो वयांसि।
प्राणापानौ ब्रीहिर्यवो तपश्च श्रद्धा सत्यं ब्रह्मचर्यं विधिश्च।।(मुण्डको. 2/1/7)

ईश्वर की प्राप्ति के लिए मनुष्य में सत्य, तप, ज्ञान और ब्रह्मचर्य का होना आवश्यक है। इनके होने से मनुष्य क्षीण दोष होकर ईश्वर के दर्शन कर सकता है जैसा कि 'मुण्डकोपनिषद्' का कथन है–

सत्येन लभ्यस्तपसा ह्येष आत्मा सम्यग् ज्ञानेन ब्रह्मचर्येण नित्यम्।
अन्तः शरीरे ज्योतिर्मयो हि शुभ्रो यं पश्यन्ति यतयः क्षीणदोषाः।। (मुण्डको. 3.1.5)

यहाँ स्पष्ट है कि सत्य से मनुष्य का मन क्षीणदोष होकर शुद्ध हो जाता है। तप से आत्मा बलवान् बनता है। ज्ञान से बुद्धि शुद्ध होकर ब्रह्मचर्य से जीवन संयमित होता है।

जो सत्य ईश्वर की प्राप्ति का कारण है उसी सत्य की महिमा को बतलाते हुए कहा गया है कि सत्य की ही विजय होती है–झूठ की नहीं। देवयान (ईश्वर की ओर चलने) का मार्ग भी सत्य से ही प्राप्त हुआ करता है, जिस पर चलकर मनुष्य सत्य के परमकोश ईश्वर तक पहुँचता है, परन्तु पहुँचते वे ही है जो साधन सम्पन्न होकर कामनारहित हो चुके हैं–

सत्यमेव जयते नानृतं सत्येन पन्था विततो देवयानः।
येनात्क्रमन्त्यृषयो ह्याप्तकामा यत्र तत्सत्यस्य परमं निधानम्।। मुण्डको. 3.1.6

यह सत्य है कि सत्य की महिमा सर्वोपरि है। इसीलिए भारत के राष्ट्रीय चिन्ह में 'मुण्डकोपनिषद्' के इस वाक्यांश–'सत्यमेव जयते' को ससम्मान प्रतीक के रूप में स्वीकार किया गया है।

प्रश्नोत्तर शैली में कहा गया है कि वह 'सत्य' नामक ब्रह्म कहाँ है? उपनिषद् का उत्तर है–तत्सत्ये प्रतिष्ठितम्।[14] अर्थात् वह ब्रह्म सत्य ही में प्रतिष्ठित है। 'छान्दोग्योपनिषद्' में भी कहा गया है कि ब्रह्म का नाम ही सत्य है।15 अतः सत्य (ब्रह्म) को प्राप्त करने के लिए सत्य से पृथक् नहीं होना चाहिए। यही कारण है कि छान्दोग्योपनिषद् में कहा गया है कि सत्य ब्रह्म से मैं परे न होऊँ।16 केनोपनिषद् में भी कहा गया है कि यदि इस ब्रह्म को जान लिया तो ठीक है यदि उसे नहीं जाना तो सर्वनाश हुआ। धीर पुरुष प्रत्येक भूत में उसकी खोज करके इस लोक से पृथक् होकर अमर हो जाते हैं।17 ब्रह्म प्राप्ति का आधार सत्य है। उस ब्रह्मविद्या की प्राप्ति के लिए तप, दम, और निष्काम कर्म ये साधना है जो वेद और सम्पूर्ण अंगों में प्रतिष्ठित है और जिनका आधार सत्य है–

तस्य तपो दमः कर्मेति प्रतिष्ठा वेदाः।
सर्वाङ्गानि सत्यमायतनम्।। केनो. 4.8

श्वेताश्वतरोपनिषद् में कहा गया है कि जैसे तिलों में तेल, दही में घी और स्रोतों में जल, अरणियों में अग्नि छिपी रहती है ऐसे ही हृदयावकाश के भीतर आत्माएँ या परमात्मा ग्रहण किया जाता है जो इस ब्रह्म को सत्याचरण और तप के द्वारा देख लेता है, वह ब्रह्म को पाता है।[18] छान्दोग्योपनिषद् में सत्याचरण की महत्ता बतलाते हुए कहा गया है कि सत्याचरण करने वाले ही ज्ञान प्राप्ति के अधिकारी हैं। सत्यकाम जाबाल द्वारा अपने गोत्र की अज्ञानता के सत्य कथन पर कहते हैं तुम सत्य से पृथक् नहीं हुए हो, अतः हे सोम्य। समिधा लाओ मै तुम्हारा उपनयन करूँगा।19 एक अन्य स्थान पर सनत्कुमार नारद से कहते हैं कि सत्य की ही जिज्ञासा करनी चाहिए क्योंकि जब विशेष रूप से जानता है तभी सत्य को कहता है, न जानता हुआ सत्य को नहीं कह सकता है।[20]

इस प्रकार यहाँ सत्यवादी की प्रशंसा की गयी है। 'छान्दोग्योपनिषद्' में कहा गया है कि जब वाणी पाप से

बिंधी हुई होती है तो मनुष्य सच और झूठ दोनों बोलता है।

तस्मात् तेनोभ्यो वदति सत्यं चानृतं च पाप्मना स्येषा विद्धा। (छान्दो. 12.3)

आगे ब्रह्मचारी की दक्षिणा बतलाते हुए कहा गया है कि जो तप, दान, सरलता, अहिंसा और सत्यभाषण हैं वे ही इसकी दक्षिणाएँ हैं।[21]

एक स्थान पर कहा गया है कि हे श्वेतकेतु। यह सब ब्रह्माण्ड आत्मा वाला (परमात्मावाला) है, वह सत्य है, वह आत्मामय है, उसी आत्मा का तू है। यहाँ श्वेतकेतु को बतलाया गया है कि उसका अस्तित्व ब्रह्म के अन्दर है। वह ब्रह्म आपकी आत्मा में व्याप्त है।

बृहदारण्यकोपनिषद् में बतलाया गया है कि यज्ञ के समय जो वेदमन्त्र ऋत्विक अपने को पवित्र बनाने के लिए पढ़ते हैं वे 'पवमान स्रोत' कहलाते हैं। आत्मोत्कर्षार्थ इनका जप किया जाता है। जपविधि 'अभ्यारोह विधि' कहलाती है। यहाँ उपलब्ध जप के कुछ वाक्य इस प्रकार हैं–

"असतो मा सद्गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय, मृत्योर्माऽमृतं गमय।" (बृहदा0 1/3/28)

यहां मृत्यु असत् है और सत् अमृत है। यहां मृत्यु से अमरता की ओर ले चलने का भान है।

एक अन्य स्थान पर कहा गया है कि यह ब्रह्म सब कुछ है। यह सत्य प्राणियों का मधु एवं समस्त प्राणी इस सत्य के मधु हैं। इस सत्य में जो यह तेजस्वी और अमर पुरुष है वह यही है जो सर्वव्यापी आत्मा है यह अमर ब्रह्म और यह सब कुछ है।[22] आत्मा सभी में रहकर अपनी सत्ता मात्र से इन्द्रिय निमित्त बन जाता है। इस आत्मा का शुद्ध नाम सत्य है। निश्चय इन्द्रियाँ सत्य है, उनकी यह आत्मा सत्य है।

'बृहदारण्यकोपनिषद्' में 'शाकल्य' और 'विदग्ध' के संवाद के मध्य एक प्रश्न उठाया गया था कि क्या तुम आदित्य ब्रह्म को जानते हो? उसका देव कौन है? तो इसका उत्तर दिया कि उसका देव 'सत्य' है। आदित्य पदार्थों के सत्य रुप का प्रकाशन करता है तो सत्य रुप भगवान् आदित्य के भी परम देव हैं।[23]

विदग्ध ने फिर प्रश्न पूँछा कि दीक्षा किसमें प्रतिष्ठित है? याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया कि 'सत्य' में। इसीलिए तो कहते हैं कि सत्य बोलो क्योंकि सत्यता में ही शिक्षा प्रतिष्ठित है। विदग्ध ने फिर पूँछा कि सत्य किसमें प्रतिष्ठित है तो उन्होंने उत्तर दिया कि हृदय में। हृदय से ही मनुष्य सत्य को जानता है और हृदय में ही सत्य प्रतिष्ठित होता है।[24]

आगे भी कहा गया है कि वह ईश्वर सत्य में प्रतिष्ठित है। मन, कर्म, वचन सब प्रकार से सत्य का आश्रय लेने से सत्य में प्रतिष्ठित सत्यरुप ईश्वर को जाना जाता है। वह सत्य बल में 'प्रतिष्ठित है, प्राण बल है अतः वह सत्य प्राण में प्रतिष्ठित है। बल की अधिकता से सत्य की रक्षा हुआ करती है। निर्बल बलवान् के भय से सत्य से विपुल हो जाता है।

इस प्रकार यहां उपनिषदों में उपलब्ध सत्य के स्वरूप पर विस्तृत विवेचन किया गया। जिसकी महत्ता सर्वसिद्ध है।

संदर्भ सूची

1. सत्येनोत्तभिता भूमिः सूर्येणोत्तभिता द्यौः। ऋ.–10.85
2. सत्यं बृहदृतमुग्र दीक्षा तपो ब्रह्म यज्ञः पृथिवीं धारयन्ति। अथर्व.–12/1–1
3. व्रतेन दीक्षामाप्नोति दीक्षयाप्नोति दक्षिणाम्।
   दक्षिणा श्रद्धामाप्नोति श्रद्धया सत्यमाप्यते।। यजु. 19.30
4. यो वै स धर्मः सत्यं वै तत् तस्मात् सत्यं वदन्माहुधर्मः वा वदन्तं सत्यं वदतीति। बृहदा. 1.4.14

5. बृहदा. 5.5.1, छान्दो. 8.3.5
6. ओ3म् शन्नो मित्रः .....वदिष्यामि। ऋतंवदिष्यामि सत्यं वदिष्यामि। तन्मामवतु..... पञ्च च। तैत्ति. 1.1.1
7. सत्यात्मप्राणारामं मन आनन्दम्। शान्ति .....। .....योग्योपास्व। तैति. 1.1.6.2
8. ऋतस्य स्वाध्याय प्रवचने च सत्यञ्च स्वाध्याय प्रवचने ..... सत्यमिति सत्यवचा राथीतरः ..... प्रवचने च षट् च। तैत्ति.1—1—1—9—10
9. वेदमनुच्या .....सत्यंवद। धर्मंचर। मातृदेवो भव। पितृदेवो भव। आचार्य देवोभव। अतिथिदेवोभव। ....ह्रिया देयम्। सप्त च। तैति. 1/1/1—4
10. सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म। यो वेद निहितं गुहायां ..... विपश्चिदेति। तैत्ति. ब्रह्मानन्द वल्ली
11. तस्य श्रद्धैव शिरः.... भवति। तैत्ति. ब्रह्मानन्दवल्ली—1.4.1
12. तदनुप्रविश्य .....भवति। ब्रह्मानन्दवल्ली—1.1.6
13. तेषामेवैष ब्रह्मलोको येषां तपो ब्रह्मचर्यं येषु सत्यं प्रतिष्ठितम्। प्रश्नो. 1.15
14. बृहदा. 5.14.4
15. तस्य ह वा एतस्य ब्रह्मणो नाम सत्यमिति। — छा. 8.3.4
16. छा. 3.11.2
17. इह चेदवेदीदथ सत्यमस्ति न चेदिहावेदीन्महती विनष्टि भवति। केनो. 2.5
18. तिलेषु तैलं दधिनीव ..... तपसा योऽनुपश्यति। श्वेता. 1.15
19. छा.उ. 4.4.5
20. छा.उ.— 7—16.1—7.17.1
21. अथयत्तपो दानमार्जवमहिंसा सत्यवचनमिति ता अस्य दक्षिणा। छा.उ.—3.19.4
22. इदं सत्यं ..... ब्रह्मेदं सर्वम्। बृहदा.— 2.5.12
23. रुपाण्येव ..... सत्यमिति होवाच। बृहदा. 3.9.12
24. कस्मिन्नुदीक्षा ..... याज्ञवल्क्य। बृहदा. 3.9.23

————————